9

सामाजिक प्रस्थिति और सामाजिक भूमिका

समाजशास्त्र का प्रमुख कार्य सामाजिक व्यवस्था की प्रकृति का परीक्षण और विश्लेषण करना है। इस कार्य का एक भाग हम "मानकों और जीवन मूल्यों" नामक पाठ में पढ़ चुके है कि सामाजिक क्रियाओं की क्रमबद्धता और नियमितता उन मानकों और जीवन मूल्यों पर आधारित होती है, जो व्यक्तियों के परस्पर संबंधों को निर्धारित और विनियमित करते हैं। ये जीवन के मानक (नार्मस्) तथा मूल्य ही तो हैं जो इन संबंधों तथा अन्तर्क्रियाओं की संभाव्यता व्यक्त करते व दर्शाते हैं और उनसे एक पद्धति का निर्धारण करते हुए, समाज की एक संरचना प्रदान करते हैं। हम, अब, एक अन्य घटना या घटक की चर्चा करना चाहते हैं, जिसका मानकों एवं जीवन मूल्यों से अंतरंग संबंध है तथा उसका समाज की वर्तमान व्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान है। यह घटक सामाजिक स्थिति, प्रस्थिति और "सामाजिक भूमिका" से संबंधित है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि :

- सामाजिक प्रस्थिति एवं सामाजिक भूमिका अर्थ बता सकेंगे;
- सामाजिक प्रस्थिति तथा इसके प्रकारों को परिभाषित कर सकेंगे; और
- सामाजिक भूमिका और इसके प्रकारों को समझा सकेंगे।

Notes

9.1 सामाजिक स्थितियाँ

हम यह भलीभाँति जानते हैं कि सामाजिक व्यवस्था में शामिल सभी लोगों से एक ही तरह के कार्यों में लगे होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। एक मानक एक ही व्यक्ति पर लागू होता है या नहीं, यह बात उस व्यक्ति की सामाजिक व्यवस्था में स्थिति या स्थान पर आधारित होता है। एक सामाजिक व्यवस्था की संरचना एवं संगठन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक पहलू यह है कि उसके सदस्यों को एक समग्र समूह में अथवा उनसे संबंधित उनके उपसमूहों में उनके द्वारा धारित सामाजिक स्थितियों के अनुसार, विभेदित किया जाता है। सामाजिक स्थिति, जो अधिकारों और दायित्वों का संकुल होती है, पूर्णतः मानकीय होती है।

जॉनसन कहते हैं कि एक सामाजिक स्थान (प्रतिष्ठा) के दो भाग होते हैं, एक में दायित्व निहित होते हैं तो दूसरे में अधिकार शामिल होते हैं। एक व्यक्ति को एक सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत एक सामाजिक स्थान (प्रतिष्ठा) तभी प्राप्त होता है जब उसके कुछ निर्धारित दायित्व हो तथा उनसे संबंधित अधिकार भी उसे प्राप्त हुए हों। सामाजिक स्थान (प्रतिष्ठा) के इन दोनों भागों में से एक को हम इसकी ''भूमिका'' कहेंगे तथा दूसरी को ''प्रस्थिति'' (स्टेटस); ''भूमिका'' का संबंध दायित्वों से होता है तो ''प्रस्थिति'' (स्टेटस) का संबंध अधिकारों से होता है। अस्तु; सामाजिक स्थान ''प्रस्थिति-भूमिका'' को इंगित करती है।

सामाजिक स्थान: एक व्यक्ति की एक समुदाय अथवा समाज विशेष में अपनी एक सामाजिक पहचान होती है; सामाजिक स्थान प्रकृति से भिन्न-भिन्न हो सकती है (जैसे कि वे लैंगिक भूमिकाओं से उनका संबद्ध होना) अथवा प्रचुर मात्रा में अधिकार विशिष्ट हो सकती हैं (जैसा कि लोगों के व्यावसायिक स्थितियों के मामले में होता है)।

9.2 प्रस्थिति और भूमिका

सामाजिक विज्ञान में प्रस्थिति एवं भूमिका की अवधारणा का महत्व बढ़ रहा है। हम उनका विवेचन करना चाहते हैं और उनमें विभेद करके उन्हें पहचानना चाहते हैं। 'प्रस्थिति' एवं 'भूमिका' की अलग-अलग पहचान 'राल्फ लिंटन' महोदय के इस कथन से आसान हो जाती है वे कहते हैं ''आपको एक ''प्रस्थिति'' (स्टेटस) प्राप्त होती है पर आप एक भूमिका का निर्वाह करते हैं।'' समाज में हर स्थान अथवा ''प्रस्थिति'' (स्टेटस) अपने साथ एक वांछित व्यवहारों की पद्धतियों का स्वरूप

लेकर चलती है। ''प्रस्थिति'' (स्टेटस) तथा भूमिका ''एक ही सिक्के के दो पहलू हैं'' लिंटन महोदय का ऐसा मत है।

यद्यपि सामाजिक स्वरूपों या पद्धतियों से प्राप्त सभी प्रस्थितियाँ और भूमिकाएँ उन पद्धतियों का पूर्ण अंग होती हैं तथापि उन व्यक्तियों जिन्हें ये प्रस्थितियाँ विशेष रूप से प्राप्त हैं तथा जिनके अनुरूप वे अपनी भूमिकाओं का निर्वाह करते हैं, से संबंधित प्रस्थितियों और भूमिकाओं का एक स्वतंत्र क्रियाकलाप या कार्य होता है।

सामाजिक संरचना के विश्लेषण के लिए प्रस्थिति एवं भूमिका की अवधारणाएँ प्राथमिक उपकरण हैं। एक समाज या समूह में एक स्थान ही सामान्यत: एक प्रस्थिति होती है। प्रत्येक समाज और प्रत्येक समूह में ऐसे अनेक स्थान होते हैं और प्रत्येक व्यक्ति जितने समुदायों या समूहों से संबंद्ध होता है, उतने ही सामाजिक प्रस्थिति प्राप्त करता है।

इस भाँति, हर व्यक्ति समाज में अनेक स्थान प्राप्त कर लेता है जिन्हें ''प्रस्थितियाँ'' कहते हैं। एक महिला एक संगीतकार, एक शिक्षक, एक पत्नी तथा एक माँ के रूप में होगी। इनमें से हर स्थान, प्राप्त अधिकारों और कर्त्तव्यों के साथ एक प्रस्थिति होता है। यद्यपि एक व्यक्ति को अनेकों सामाजिक प्रस्थितियाँ प्राप्त हो सकती हैं, उनमें एक को हम प्रमुख प्रस्थिति कह सकते हैं जिसके द्वारा व्यक्ति समाज में मुख्य रूप से पहचाना जाता है।

आधुनिक मानव शास्त्र तथा समाजशास्त्र के विकास के साथ, प्रस्थिति की अवधारणा का सभी सांस्कृतिक रूप से निर्धारित अधिकारों और कर्त्तव्यों को सम्मिलित करने के लिए विस्तृत किया गया है।

9.3 सामाजिक प्रस्थिति

'प्रस्थिति' शब्द, 'संस्कृति' शब्द के ही समान, दोहरे अर्थों में प्रयुक्त होने लगा है। 'प्रस्थिति' (स्टेटस) एक खास तरीके से प्राप्त एक स्थिति होती है। इस तरह, यह सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा अनेक प्रस्थितियाँ धारण करता है। फिर भी जब तक यह परिभाषिक शब्द किसी विशिष्ट भाँति से प्रयुक्त नहीं होता तब तक एक व्यक्ति को प्रस्थिति का अर्थ या आशय एक व्यक्ति के द्वारा धारण की गई तमाम प्रस्थितियों के समग्र रूप से होता है। इसमें सम्पूर्ण समाज से संबंधित उसके स्थिति का प्रतिनिधित्व निहित होता है।

एक प्रस्थिति, साधारण तौर पर अधिकारों तथा कर्त्तव्यों का संकलन या समुच्चय होता

Notes

है। ये अधिकार और कर्त्तव्य व्यक्तियों के माध्यम से ही अभिव्यक्त हो पाते हैं अतः हमारे लिए यह अत्यंत कठिन है कि हम प्रस्थितियों और उन अधिकारों तथा कर्त्तव्यों जिनसे वह प्रस्थिति निर्मित होती है, के धारक लोगों में विभेद कर सकें।

व्यापक एवं विस्तृत रूप से, समाजशास्त्र में प्रस्थिति के दो अर्थ होते हैं।

(1) **सम्बंधीय पारिभाषिक शब्दः** ज्यादा संख्या में समाजशास्त्री 'प्रस्थिति' को साधारण तौर पर, एक व्यक्ति के द्वारा एक सामाजिक व्यवस्था में धारण की गई स्थिति या स्थान के रूप में परिभाषित करते हैं। वैवाहिक स्थिति में उदाहरणतः ''पति'' और ''पत्नी'' की ''प्रस्थितियाँ'' होती हैं। कचहरी की व्यवस्था में ''वकील साहब'', ''जूनियर'' तथा ''जज साहब'' जैसी प्रस्थितियाँ होती हैं। ध्यान देने योग्य बात है कि 'प्रस्थिति' विशुद्ध रूप से, एक संबंधशील या संबंधीय पारिभाषिक शब्द है जिसका आशय यह है कि प्रत्येक प्रस्थिति उसका एक या एक से अधिक प्रस्थितियों से संबंध के माध्यम से अस्तित्व में बनी रहती है। उदाहरणतः ''पति'' ऐसी श्रेणी है जिसकी 'पत्नी' की श्रेणी से संबंधित होने के अलावा अन्य कोई समझयोग्य श्रेणी नहीं होती। जिस प्रकार न्याय प्रणाली की अन्य संबंधित प्रस्थितियों के बिना 'जजों' की कोई प्रस्थिति नहीं होती।

प्रारम्भ में 'प्रस्थिति' की अवधारणा वंशानुगत रूप से प्राप्त पद के रूप में जानी जाती थी। उन्नीसवीं सदी के अंगरेजी विकासवादी सुप्रसिद्ध लेखकों : सर हेनरी मैन, रॉबर्ट. ई. पार्क तथा अर्नस्ट. डब्लयू बगिस आदि का ऐसा कहना था। मैन ने प्रस्थिति से इकरारनामे (काँट्रेक्ट) तक के संक्रमण के विषय में लिखा है।

(2) **सहभागीय (सहभागियशील) प्रस्थितिः** प्रस्थितियाँ सामाजिक व्यवस्था में स्थिति, पद या स्थान हैं अतः वे व्यक्ति जो उन्हें प्राप्त करते हैं, के लिए स्वतंत्र रूप में स्थित रहती हैं। वास्तव में, एक प्रस्थिति तब भी बनी रहती है जबकि उसे कोई भी व्यक्ति धारण नहीं कर रहा है जैसे ''प्रधान मंत्री जब वर्तमान मंत्री दिवंगत हो गए हों और नए मंत्री का अभी चुनाव होना है अथवा उस ''प्रत्याशी' की प्रस्थिति जब कि कोई चुनाव भी नहीं होने वाला हो। लोग उन सामाजिक व्यवस्था में अपनी भागीदारी के माध्यम से ही प्रस्थितियों से संबद्ध होते हैं। इस अपेक्षाकृत साधारण सिद्धान्त में वह बुनियादी समाजशास्त्रीय अन्तर्दृष्टि निहित है, जिसके अनुसार सामाजिक व्यक्ति का पर्याय नहीं माना जा सकता है।

यदि हम सभी धारण की गई प्रस्थितियों को समग्र रूप में लें तो परिणाम एक प्रस्थिति-समूह के रूप में समझा जाएगा। प्रस्थिति-समूह में भिन्न-भिन्न प्रकार की वे

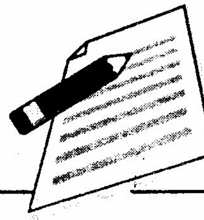

Notes

सभी प्रस्थितियां सम्मिलित होंगी जो हमें सामाजिक व्यवस्था में प्राप्त हैं। प्रस्थिति-समूह लोगों को उन बहु-आयामीय सामाजिक सम्बन्धों के जाल से संबंधित करता है जिसमें कि हम रहते हैं।

> **प्रस्थिति:** एक समाज के सदस्यों द्वारा एक समूह विशेष को दिया गया सामाजिक सम्मान और प्रतिष्ठा। एक समान प्रस्थिति के लोग विशिष्ट जीवन शैलियों, एवं व्यवहार पद्धतियों के अनुसार रहते हैं, जिनका समूह के अन्य लोग अनुसरण करते हैं। प्रस्थिति परक विशेषाधिकार सकारात्मक अथवा नकारात्मक हो सकता है।

9.3.1 प्रस्थिति की विशेषताएँ

प्रस्थिति में बहुधा निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:

(1) प्रस्थिति समाज की आवश्यकताओं और रुचियों का परिणाम होती हैं;

(2) प्रस्थिति अन्यों के ऊपर एक खास प्रकार का अथवा खास सीमा में प्राधिकार रखती है;

(3) प्रस्थिति सापेक्षिक होती है;

(4) प्रस्थिति सामाजिक स्तरीकरण की दिशा-निर्देश कर सकती है;

(5) प्रस्थिति के पास कुछ विशेषाधिकार और प्रतिरक्षाएँ (उन्मुक्तियाँ) होती हैं, जैसे किसी स्थान के प्रयोग का अधिकार, सचिव की सेवाओं का अधिकार, आदि;

(6) प्रस्थिति में प्रतिष्ठा का कुछ अंश सम्मिलित होता है;

(7) प्रस्थिति के अनुरूप पारिश्रमिक प्राप्ति का अधिकार भी हो सकता है;

(8) प्रस्थिति को भूमिका से अलग नहीं किया जा सकता।

9.3.2 प्रस्थिति के प्रकार

प्रस्थितियाँ, इस तथ्य के बावजूद कि वे जैविक कारकों जैसे लिंग, जाति और वंश या कुल पर आधारित हो सकती हैं, सांस्कृतिक रूप से परिभाषित की जाती हैं। प्रस्थिति दो प्रकार की होती हैं; प्रदत प्रस्थिति और अर्जित प्रस्थिति।

प्रदत प्रस्थिति वह सामाजिक स्थान है, जो जन्म के साथ तय होती है और इसलिए प्राय: स्थायी होती है। इसलिए एक प्रदत (एस्क्राइब्ड) प्रस्थिति वह है, जिसमें व्यक्ति पैदा होता है और जिसमें वह आजीवन बना रहता या बनी रहती है जैसे, लिंग जाति,

Notes

वंश और उम्र। एक ब्राह्मण, ब्राह्मण कुल में जन्म लेने के कारण संबंधित या पारंपरिक प्रस्थिति प्राप्त करता है। इसके साथ लिंग, पारिवारिक पृष्ठभूमि, जन्मस्थान, तथा परिवार का नाम आदि प्रदत प्रस्थितियाँ प्रदान करते हैं। इन प्रस्थितियों को परंपरागत प्रस्थितियाँ कहा जाता है। परंपरागत प्रस्थितियाँ जन्म से ही निश्चित हो जाती हैं। भारत में जाति की प्रस्थिति सामान्यत: परंपरागत होती है, यद्यपि इसमें सांस्कृतीकरण' और ''अन्तरजातीय विवाहों'' के कारण अनेक परिवर्तन हो रहे हैं। कुछ देशों में सामाजिक वर्ग परंपरागत प्रस्थिति के अंतर्गत आता है जो, उसे समाज द्वारा पंचायती तौर से प्रदान की जाती है।

अर्जित या प्राप्त प्रस्थिति वह स्थिति है जो व्यक्ति द्वारा प्राप्त की जाती है, जैसे एक विवाहित व्यक्ति, एक माता-पिता, एक मित्र, एक डाक्टर, अथवा एक इंजीनियर बनना। अर्जित प्रस्थिति अपने निजी प्रयासों से मिलती है। समाज इन परिवर्तनों को अर्जित या प्राप्त प्ररिथतियों के रूप में पहचान प्रदान करता है।

ऐसी प्रस्थितियाँ जिनका निर्धारण वंशानुक्रम, जैविक विशेषताओं, आदि पर आधारित नहीं होता, उन्हें अर्जित प्रस्थितियाँ माना जात है। एक अर्जित की गई प्रस्थिति सोद्देश्य क्रियाकलाप तथा चुनाव के परिणामस्वरूप प्रकट होती है। इस प्रकार एक अर्जित या प्राप्त की गई प्रस्थिति व्यक्ति के द्वारा किए गए किसी कार्य पर आधारित है। लेखक की प्रस्थिति पुस्तकों के प्रकाशन से प्राप्त की जाती है; एक पति की प्रस्थिति शादी करने या शादी का लाइसेंस प्राप्त करने पर ही प्राप्त होती है। कोई व्यक्ति एक लेखक अथवा पति के रूप में पैदा नहीं होता। इस भाँति एक व्यक्ति की वैवाहिक प्रस्थिति तथा व्यावसायिक प्रस्थितियाँ अर्जित या प्राप्त की जाती हैं।

कुछ प्रस्थितियाँ प्राप्त तथा परंपरा से संबंधित दोनों ही तत्वों से युक्त होती हुई दिखाई देती हैं। एक पी.एच.डी. डिग्री प्राप्त कर लेना निश्चित रूप से व्यक्ति की उपलब्धि प्राप्त होती है। किंतु एक बार एक व्यक्ति ने इसे प्राप्त कर लिया तो यह व्यक्ति के जीवन का स्थायी भाग तथा भूमिका बन जाती है और अन्य के द्वारा भी वर्णित की जाती है। अत: यह सभी तथ्यों और उद्देश्यों से यह एक प्रदत प्रस्थिति हो जाती है। कुछ प्रस्थितियाँ व्यक्तियों को समाज द्वारा प्रदत की जाता है तो कुछ अन्य उनके द्वारा अर्जित या प्राप्त की जाती है। पारंपरिक प्रस्थितियाँ प्राथमिक समूहों की सदस्यता से प्राप्त हो जाती हैं तो अर्जित या प्राप्त प्रस्थितियाँ द्वितीयक या स्वैच्छिक समूहों में सदस्यता ग्रहण करने से प्राप्त होती हैं। उदाहरणत:, उम्र और लिंग सम्बन्धी दोनों ही प्रस्थितियाँ पारंपरिक होती हैं, अर्जित या प्राप्त नहीं। ये प्रास्थितियाँ जैविक दशाओं पर आधारित होती हैं और हम उनके विषय में कुछ कर नहीं सकते क्योंकि वास्तविक उम्र का छिपाया जाना मनुष्य की शक्ति और सीमा के परे है।

Notes

पाठगत प्रश्न 9.1

उपयुक्त शब्दों द्वारा रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

1. एक सामाजिक व्यवस्था में, सदस्यों का उनके द्वारा समूह में प्राप्त ......के अनुसार अलग पहचान पाते हैं।
2. सामाजिक प्रस्थिति के .... और .... दो भाग होते हैं।
3. आपको एक प्रस्थिति प्राप्त है, किंतु आप समाज में एक .... का निर्वाह करते हैं।
4. प्रस्थिति के दो प्रकार होते हैं: .... और ....।
5. प्रदत प्रस्थिति का एक उदाहरण दीजिए........।
6. अर्जित या प्राप्त प्रस्थिति का एक उदाहरण दीजिए.............।

9.4 सामाजिक भूमिका

> ''प्रास्थिति'' की अवधारणा संबंधित ''भूमिका'' की अवधारणा से है। लिंटन भूमिका को प्रस्थिति का प्रगतिशील पहलू मानते हैं। भूमिका को प्रस्थिति से अलग करना असंभव होगा। इस तरह भूमिका निर्वाह प्रस्थिति का प्रगतिशील अथवा व्यावहारिक पहलू होता है। यह प्रस्थिति का प्रगतिशील पहलू है और यह अधिकारों और कर्त्तव्यों का एक सम्मिश्रण होता है।

प्रत्येक प्रस्थिति की उससे संबद्ध एक अथवा अधिक भूमिकाएँ होती हैं। प्रस्थितियाँ ग्रहण की जाती हैं पर भूमिकाओं का निर्वाह किया जाता है। भूमिका निर्वाह प्रस्थिति से संबद्ध वांछित व्यवहार-पद्धति होता है जिसके विशेष अधिकार और दायित्व होते हैं। भूमिका का निर्वाह वह व्यवहार है, जिसमें एक व्यक्ति विशेष दायित्वों का निर्वाह करता है और उसके विशेषाधिकार एवं सुविधाओं का आनंद प्राप्त करता है। भूमिका वह है, जो एक व्यक्ति अपने द्वारा धारित प्रस्थिति के अनुसार निभाता है। यह स्पष्ट है कि विभिन्न व्यक्ति उसी प्रस्थिति में होते हुए भिन्न-भिन्न रीति से कार्य करते हैं। भूमिका की अवधारणा इन विभिन्नताओं का लेखा-जोखा रखने हेतु सक्षमता प्रदान करती है।

समाजशास्त्र में **सामाजिक भूमिका** की अवधारणा का प्रयोग एक नाटकीय संदर्भ से उदित होता हुआ है। भूमिकाएँ सामाजिक रूप से पारिभाषित अपेक्षाएं होती हैं जिन्हें

एक व्यक्ति अपने प्रस्थिति विशेष अथवा अपने सामाजिक स्थिति के अनुरूप निर्वाहन करता है। किसी भूमिका का निर्वाहन अन्य भूमिका के संदर्भ में ही किया जाता है। उदाहरणत: अध्यापक की **भूमिका** छात्रों के साथ शिक्षकों से संबंधित विचार-समूहों द्वारा निर्मित होती है। वे विश्वास जिनके वे अनुयायी हैं, 'जीवनमूल्यों' से संबंधित लक्ष्यों जिनका उन्हें संधान करना चाहिए, वे "प्रतिमान" जिनको उन्हें व्यवहार में लाना चाहिए आदि बातें इसमें सम्मिलित होती हैं। शिष्य की भूमिका में प्राय: यह विश्वास सम्मिलित होता है कि विद्यार्थी को शिक्षक की अपेक्षा कम ज्ञान होता है, वह जीवनमूल्य जिसमें निहित हैं कि अध्ययन अपने आप में एक सही लक्ष्य है और यह अपेक्षा कि छात्र समय पर पहुँचेंगे और कठिन परिश्रम करेंगे तथा जो निर्धारित किया जाएगा उसे सीखेंगे और वे अपने शिक्षकों तथा अन्य विद्यार्थियों के प्रति सम्मान की अभिवृत्ति बनाए रखेंगे।

यदि एक विशेष प्रस्थिति को प्राप्त करने से संबंधित विभिन्न भूमिकाओं को एक साथ मिला दिया जाता है तो परिणाम एक *भूमिका-समूह* के रूप में प्रकट होता है। कभी-कभी भूमिका संघर्ष भी तब उठ खड़ा होता है जबकि लोगों को अपने जीवन में विरोधाभासी भूमिका निर्वाह की अपेक्षाओं का विभिन्न सामाजिक प्रस्थितियों में सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, एक माता-पिता की वह संघर्षपूर्ण स्थिति जिसमें उसे एक ओर नौकरी पर रखने वाले मालिक की पूर्ण स्वामिभक्ति के निर्वाह की माँग का दायित्व निभाना है तो दूसरी ओर अपने बीमार बच्चों की देखभाल भी करनी है।

भूमिका निर्वाह में आने वाले संघर्ष के निराकरण और भूमिका संघर्ष के कम अवसर आने देने के लिए अनेक प्रकार के उपाय हो सकते हैं पहली बात यह है कि आप यह चुनें कि इनमें से कौन सी भूमिका ज्यादा महत्वपूर्ण है फिर दूसरी भूमिका से जुड़ी हुई अपेक्षाओं की तनिक उपेक्षा कर दीजिए। दूसरा उपाय यह है कि संघर्ष वाली दोनों प्रस्थितियों में से एक को छोड़ दीजिए। (यदि माता-पिता वाले दायित्वों के निर्वाह में अधिक व्यवधान पड़ता हो तो व्यक्ति उस, नौकरी को छोड़ सकता है।) तीसरा उपाय है कि भूमिका में अलगाव लाइए अर्थात उसी भूमिका में लगे हुए विभिन्न साथियों में परस्पर कार्य को बांटने का प्रयास कीजिए। (उदाहरणत:, डाक्टर अपने ही परिवार के सदस्यों का स्वयं इलाज करने से इन्कार कर दे।) चौथा उपाय, भूमिका से दूरी रखना, अर्थात असहमतिवाली भूमिका से जुड़े हुए कार्य के तनाव को कम करने का तरीका खोजिए। उदाहरण के लिए, वे मैनेजर जिन्हें अपनी फर्म को कम खर्चीली और अधिक सक्षम तथा स्पर्धा में प्रगतिशील बनाने के लिए बहुत से कर्मचारियों को नौकरी से निकालने के लिए जो कुछ करना है उससे स्वयं को अलग करने की विभिन्न तकनीक खोजनी चाहिए।

> **सामाजिक भूमिका:** समाज में एक विशेष स्थान प्राप्त एक व्यक्ति का अपेक्षित व्यवहार। सामाजिक भूमिका-निर्वाह का विचार मूल रूप से एक थियेटर से आता है, जहाँ पात्र मंच पर अपनी-अपनी भूमिकाओं का निर्वाह करते हैं। प्रत्येक समाज में लोग अपनी-अपनी विभिन्न सामाजिक संदर्भों के अनुरूप स्वयं की भूमिकाओं को निभाते हैं।

9.4.1 भूमिका की विशेषताएँ

(1) भूमिका प्रस्थिति का प्रगतिशील पहलू है।

(2) भूमिका प्रस्थिति में ही निहित होती है। भूमिका को प्रस्थिति से अलग नहीं किया जा सकता।

(3) भूमिका निर्वात (रिक्त स्थान) में नहीं मिलती। इसका एक सांस्कृतिक पहलू होता है।

(4) संस्कृति भूमिका का प्रतिमानात्मक पहलू होती है।

(5) भूमिका सापेक्ष्य होती है।

प्रस्थितियों के बिना भूमिका का कोई अस्तित्व नहीं होता अथवा बिना भूमिकाओं के कोई प्रस्थिति नहीं होती। प्रस्थिति की भाँति भूमिका भी दो अर्थों में प्रयुक्त होती है। प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों में भाग लेते हुए भूमिकाओं की स्रअपने कार्य और विद्यार्थियों के प्रति उनके संवेगात्मक प्रदर्शन की अभिवृत्तियाँ, श्रृंखलाओं का निर्वाह करता है। इसी तरह प्रत्येक व्यक्ति की एक सामान्य भूमिका भी होती है, जिसमें वह उन सभी भूमिकाओं के समग्र रूप का प्रतिनिधित्व करता है और यह निर्धारित करता है कि अपने समाज के लिए उसका क्या योगदान है समाज से वह कौन-कौन सी अपेक्षाएँ कर सकता है।

प्रत्येक प्रस्थिति में अनेक भूमिकाएँ निहित होती हैं। एक व्यक्ति जो शिक्षक की प्रस्थिति धारण करता है, वह एक तरीके से विद्यार्थियों से व्यवहार करता है दूसरे तरीके से अपने साथी शिक्षकों से तथा और एक दूसरे तरीके से प्राचार्य महोदय से व्यवहार करता है। इस तरह भूमिकाओं का संग्रहीत स्वरूप जो एक प्रस्थिति विशेष के साथ-साथ चलता है– एक *भूमिका समुच्चय* कहलाता है।

सामाजिक भूमिकाएँ व्यवहार को नियमित और संगठित करती हैं। विशेष रूप से वे विशेष कार्यों के संपादन के लिए साधन प्रदान करती हैं। उदाहरणत: इस विषय पर

Notes

बहस छिड़ सकती है कि यदि शिक्षक और विद्यार्थी अपनी भूमिकाएं उपयुक्त रीति से निभाएँ तो शिक्षण अधिक सक्षमता से संपन्न हो सकता है। इसमें जीवन के अन्य क्षेत्रों के मसलों को छोड़ दिया गया है ताकि जो कार्य हाथ में है, उस पर मन एकाग्र किया जा सके। भूमिकाएँ समाजिक जीवन को क्रम (व्यवस्था) और संभाव्यता प्रदान करती हैं। अपनी-अपनी भूमिकाओं के संदर्भ में परस्पर अन्तर क्रियारत शिक्षक और विद्यार्थी जानते हैं कि उन्हें क्या करना है और उसे किस भाँति करना है। प्रत्येक एक-दूसरे की भूमिका को जानते हुए वे एक दूसरे के कार्यों के विषय में पूर्व से ही समझ सकते हैं। एक व्यवस्थित समाज के लिए भूमिका, एक संस्कृति के पहलू के रूप में आवश्यक सुझाव और निर्देशक तत्व के काम करती है।

9.4.2 भूमिकाओं के प्रकार

एक भूमिका पद्धति ''निष्पादन'' पर जोर देती है, यदि कोई व्यक्ति इस बात पर ध्यान दे कि भूमिका का धारक क्या कर सकता है और उसे कितनी अच्छी तरह कर सकता है, चाहे उसकी उम्र, लिंग तथा सामुदायिकता कुछ भी और कैसी भी हो। लिंटन ''प्रदत'' और ''अर्जित'' भूमिकाओं में विभेद करते हैं। यदि एक धारक किसी भूमिका को किसी गुण विशेष अथवा अन्य ऐसे संबंधों जो नियंत्रण से परे हों, के माध्यम से अपने आप प्राप्त कर लेता है तो उसे ''परंपरागत या प्रदत'' (ऐस्क्राव्ड) भूमिका कहा जाएगा। इस प्रकार की संबंधशीलता के सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार एक विशेष परिवार में जन्म, जन्म क्रम, लिंग और उम्र होते हैं।

प्रदत या पारंपरिक भूमिका: वह भूमिका जो किसी व्यक्ति को अपने आप जन्म के अथवा निश्चित उम्र की स्थिति में सुलभ होती है। सर्वाधिक सर्वभौम प्रदत भूमिका तो किसी व्यक्ति की लैंगिक भूमिका ''पुरुष'' या ''नारी'' होती है। विभिन्न उम्रों के स्तरों से भी विभिन्न स्तरों की अपेक्षाएँ होती हैं। एक जाति, वंश या धार्मिक समूह-विशेष में किसी के जन्म लेने पर आधारित भूमिकाएँ ''प्रदत (पारंपरिक)'' होती हैं। इस प्रकार, ऐसी भूमिकाओं पर जन्म का मूल प्रभाव होता है। उदाहरण के लिए, परंपरागत रीति से एक खास जाति में जन्म ले लेने पर एक खास भूमिका अदा करनी होती है; जैसे एक पुजारी का बेटा एक पुजारी बनने की शिक्षा पाएगा।

तकनीकी रूप से जो भूमिका 'पारंपरिक या प्रदत'' नहीं होती वह ''प्राप्त की गई या अर्जित'' कहलाती है।

अर्जित भूमिकाएँ: एक भूमिका जो व्यक्ति निभा रहा है, वह इसलिए है कि उसने या तो चुनी है या मेहनत से प्राप्त की है। वह उसके परिश्रम, प्रयासों और कार्यों का परिणाम है। इस भाँति वे भूमिकाएं जिन्हें व्यक्तिगत प्रयासों से अर्जित किया जाता है, उन्हें अर्जित भूमिकाएँ कहा जाता है जैसे; फौज में जनरल बनना, डाक्टर, इंजीनियर आदि बनना।

पाठगत प्रश्न 9.2

उपयुक्त शब्दों द्वारा रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

1. एक .... प्रस्थिति का प्रगतिशील पहलू होती है।
2. एक प्रस्थिति विशेष के साथ संबद्ध विभिन्न भूमिकाओं के समुच्चय को .... कहा जाता है।
3. भूमिका प्रस्थिति से .... नहीं हो सकती।
4. भूमिका का प्रतिमानात्मक पहलू .... है।
5. भूमिकाओं के दो प्रकार ....होते हैं।

आपने क्या सीखा

- हमने इस अध्याय को प्रस्थिति की महत्ता संबंधी कुछ जानकारियों से प्रारंभ किया तथा यह सुझाव दिया कि अनेक सामाजिक परिस्थितियों का समग्र अर्थ उसमें निहित प्रस्थितियों पर आधारित होता है।
- इसके अतिरिक्त, हमने इस बात पर बल दिया है कि एक मिश्रित समाज में व्यक्तियों के परस्पर संबंध प्रस्थिति (स्टेटस) परक होते हैं।
- हमने प्रस्थिति और भूमिका में विभेद दर्शाया है। प्रस्थिति एक संरचनात्मक घटना है और भूमिका एक व्यावहारिक घटना है। प्रस्थिति समाजशास्त्र की एक अवधारणा है, भूमिका सामाजिक मनोविज्ञान की एक अवधारणा है प्रस्थिति सामाजिक संरचना पर आधारित होती है, भूमिका व्यक्तियों के व्यक्तित्वों और समताओं पर आधारित होती है। हालांकि प्रस्थिति और भूमिका दोनों, प्राय: साथ-साथ दिखाई देते हैं, यह अनुमान लगाना असंभव है कि कोई प्रस्थिति भूमिका के बिना और कोई भूमिका प्रस्थिति के बिना होगी। लोग प्रस्थितियाँ

ग्रहण या धारण करते हैं और भूमिकाएँ निभाते हैं। परिवर्तनशील समाज में, जबकि, प्रतिमानों में लगातार परिवर्तन होता रहता है तो प्रस्थितियाँ भी अनुसरण करती हैं अर्थात बदलती रहती हैं। नई प्रस्थितियाँ, समाज में पैदा होती हैं तथा पुरानी गायब हो जाती हैं। विशेष रूप से, व्यावसायिक प्रस्थितियों में सक्षम और योग्य धारक अपने दायित्वों और अधिकारों का क्षेत्र बढ़ा लेते हैं जबकि अयोग्य और अक्षम लोग एक विपरीत प्रभाव से ग्रसित हो जाते हैं। हमने ''परंपरागत या संबंधशील प्रस्थिति और अर्जित या प्राप्त प्रस्थिति की भी चर्चा की है और साथ ही संबंधशील या परंपरागत भूमिका तथा ''अर्जित/ प्राप्त भूमिका'' की भी चर्चा की है।

पाठगत प्रश्न 9.3

1. प्रमुख प्रस्थिति किसे कहते हैं?

   ----

2. संबंधशील और सहभागीय प्रस्थितियाँ क्या होती हैं?

   ----

3. भूमिका की किन्हीं तीन विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

पाठान्त प्रश्न

1. सामाजिक स्थिति को परिभाषित कीजिए।
2. सामाजिक प्रस्थिति की परिभाषा लिखिए। सामाजिक प्रस्थिति और भूमिका के मध्य परस्पर संबंधशीलता का विवेचन कीजिए
3. प्रस्थिति और भूमिका को परिभाषित कीजिए तथा उदाहरण देकर उनका विभेद स्पष्ट कीजिए।
4. ''परंपरागत या प्रदत'' तथा ''अर्जित या प्राप्त'' प्रस्थितियों में मूलभूत अंतर स्पष्ट कीजिए। प्रत्येक को सोदाहरण समझाइए।
5. भूमिका से आप क्या समझते हैं? भूमिका के विभिन्न प्रकारों का विवेचन कीजिए।

6. "प्रस्थितियाँ ग्रहण या धारण की जाती हैं किंतु भूमिकाएँ निभाई या अदा की जाती हैं। स्पष्ट विवेचन कीजिए।

7. भूमिका संघर्ष क्या होता है? भूमिका-संघर्ष की स्थिति को संभालने के लिए काम में लाई गई क्रियाविधि का वर्णन कीजिए।

8. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए:

(अ) प्रस्थिति-समुच्चय

(ब) भूमिका-समुच्चय

(स) प्रदत तथा अर्जित प्रस्थितियाँ

(द) प्रदत्त तथा अर्जित भूमिकाएँ

(ई) भूमिका-तनाव तथा भूमिका-संघर्ष

(फ) भूमिका-दूरी

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

9.1 (1) सामाजिक स्थान (स्थितियाँ) (2) भूमिका और प्रस्थिति।

(3) भूमिका (4) परंपरागत (प्रदत); अर्जित

(5) जैसे–ब्राह्मण, पुरुष, नारी आदि (6) जैसे–इंजीनियर डाक्टर, शिक्षक आदि।

9.2 (1) भूमिका (2) भूमिका-समुच्चय (3) अलगाव

(4) संस्कृति (5) परंपरागत (प्रदत): अर्जित/ प्राप्त।

9.3 (1) भाग 9.2 से संबंधित (2) भाग 9.3 से संबंधित।

(3) भाग 9.4 से संबंधित।

पाठ्य पुस्तकें

(1) बियरस्टेड, गॅबर्ट: (1970) दी सोशल आर्डर, नई दिल्ली, टाटा मैकग्रा-हिल पब्लिशिंग [illegible]

(2) डेविस. कं. (1949) ह्यूमन सोसाइटी, मैकमिलन।

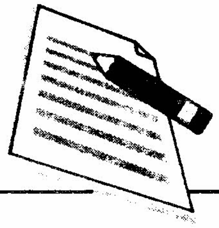

Notes

(3) गिडिंस, एँथेनी (1993), सोशियोलॉजी, शिकागो, दी यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।

(4) जॉनसन, हैरी एम. (1960) 'सोशियोलोजी' नई दिल्ली, प्रकाशक एलाइड पब्लिशर्स प्रा. लि.

(5) लिंटन, राल्फ (1936) 'दी स्टडी ऑफ मैन' एपिल्टन सेंचूरी कॉफ्रेंस आई. एन. सी.।